प्रिडेटरी जर्नल्स : गुणवत्तापूर्ण शोध के समक्ष चुनौती

drishtiias.com/hindi/printpdf/prioradary-journals-challenge-to-quality-research

संदर्भ

- पिछले दशक में प्रिडेटरी जर्नल्स (Predatory Journals) वैज्ञानिक प्रकाशनों के लिये अभिशाप बनकर सामने आये हैं।
- ऐसी पत्रिकाओं के प्रकाशकों द्वारा व्यवसाय के अनैतिक तरीके अपनाने के बावजूद इनमें लेख प्रकाशित कराने वाले शोधार्थियों की संख्या खतरनाक दर से बढ़ रही है।
- 2010 में इन जर्नल्स में प्रकाशित पत्रों की संख्या लगभग 53,000 थी जो 2014 में बढ़कर 420,000 हो गई।

क्या है प्रिडेटरी जर्नल्स?

- प्रिडेटरी पब्लिशिंग ओपन एक्सेस पब्लिशिंग मॉडल का पैसे कमाने के लिये किया गया दुरुपयोग है। यदि कोई शोधार्थी इन पब्लिशर्स को भुगतान करता है तो ये उसके लेखों और शोध-पत्रों को अपने जर्नल में छाप देते हैं।
- पीयर रिव्यू सिस्टम यानि समकक्षों द्वारा समीक्षा, शैक्षणिक मूल्यांकन और प्रकाशनों का मूल आधार होता है किंतु इनके पास न तो कोई संपादक बोर्ड होता है और न ही इन लेखों की समकक्षों द्वारा समीक्षा होती है।
- इस कारण इनके द्वारा अति-साधारण और बेकार शोध पत्र प्रकाशित किये जाते हैं तथा इसके लिये ये भारी प्रकाशन शुल्क भी लेते है।
- वैज्ञानिकों की सहमति के बिना उन्हें संपादकों और बोर्ड के सदस्यों के रूप में शामिल कर लिया जाता है, ये नक़ल की गई नैतिक नीतियों और निर्देशों के पालन का भी दावा करते हैं और सम्मानजनक वेबसाइटों पर उल्लेखित होने का दावा भी करते हैं।

भारत में स्थिति

- भारत प्रिडेटरी जर्नल्स के प्रकाशन का केंद्र है। 2015 में BMC मेडीसिन पेपर के मुताबिक ऐसी पत्रिकाओं के लगभग 35% लेखक भारतीय हैं और 27% प्रिडेटरी जर्नल्स प्रकाशक भी यहीं स्थापित थे।
- इस प्रकार भारत दोनों श्रेणियों में पहले स्थान पर था। सितंबर 2017 में नेचर पत्रिका ने यह पाया कि प्रिडेटरी पत्रिकाओं में छपे कुल 1,907 पत्रों में भारत के लेखकों की हिस्सेदारी 27% थी।

क्या है इस समस्या का कारण?

- प्रारंभ में ऐसी पत्रिकाओं में शोध पत्रों को लेखकों को धोखे में रखकर प्रकाशित किया जाता रहा। किंतु अब भारत के शोधार्थी, विशेषकर राज्य विश्वविद्यालयों के इस तरह की पत्रिकाओं की खोज में रहते हैं।

- इसके लिये ज़िम्मेदार कारणों में अधिकांश कॉलेजों और राज्य विश्वविद्यालयों में शोध गतिविधियों संबंधी बुनियादी ढाँचे की अनुपलब्धता एक कारण तो है ही किंतु विश्वविद्यालय अनुदान योग (UGC) की नीतियाँ इसका प्रमुख कारण है।
- UGC द्वारा शुरू किये गए शैक्षणिक प्रदर्शन संकेतक (Academic Performance Indicators-API) प्रणाली के तहत प्रत्येक पीएचडी शोधार्थी को थीसिस जमा करने से पहले कम-से-कम दो शोध पत्र प्रकाशित करवाने अनिवार्य हैं।
- कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में भर्ती और पदोन्नति के लिये मूल्यांकन के समय शिक्षकों हेतु भी ऐसी ही स्थिति मौजूद है।
- UGC की इस अदूरदर्शी नीति ने अनजाने में ही ऐसी पत्रिकाओं की अचानक और भारी मांग पैदा की है जो जान-बूझकर कम कीमत पर निम्नस्तरीय पत्र प्रकाशित करते हैं।
- इससे निपटने के लिये जनवरी 2017 में UGC ने पत्रिकाओं की एक श्वेत सूची पेश की, जहाँ शोधार्थी API शर्तों को पूरा करने के लिये पत्र प्रकाशित करा सकते हैं।
- यदि API की शुरुआत बिना सोचे- समझे की गई थी तो अब वैज्ञानिक समुदाय की भागीदारी के बिना तैयार की गई इस श्वेत सूची में कम-से-कम 200 प्रिडेटरी जर्नल्स शामिल कर लिये गए।
- इसके अतिरिक्त विश्वविद्यालय इस सूची में शामिल किये जाने के लिये नए जर्नल का सुझाव दे सकते हैं और इसमें शामिल करने के लिये मानदंड न केवल अस्पष्ट हैं बल्कि कमज़ोर भी हैं।

प्रभाव

- प्रिडेटरी जर्नल्स के कारण शोध गतिविधियों की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- गुणवत्तापूर्ण प्रकाशनों के अभाव में योग्य और आवश्यक शोधार्थियों की बजाय औसत दर्जे के लोगों को नौकरी और पदोन्नति के अवसर मिल जाते हैं। इससे शैक्षणिक क्षेत्र में उत्कृष्टता के मानकों का क्षरण शुरू हो जाता है।
- इसका सर्वाधिक प्रभाव मेडिकल साइंस के शोध-पत्रों पर पड़ा है जो कि अधिकांशत: अवैज्ञानिक चिकित्सा प्रथाओं को बढ़ावा दे रहे हैं।
- प्रिडेटरी जर्नल्स साहित्यिक चोरी (Plagiarism) की बुराई को बढ़ावा देते हैं जिसमें किसी अन्य शोधार्थी के विचारों और शोध को किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रकाशित कर दिया जाता है। इससे शोध-पत्रों की मौलिकता पर संदेह बना रहता है।

आगे की राह

- दुर्भाग्य से सूची में शामिल किये जाने के लिये एक पत्रिका की पहचान करने हेतु कारक अभी अपर्याप्त हैं। इसलिये इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि विश्वविद्यालयों द्वारा अनुशंसित जर्नलों में से अधिकांश प्रिडेटरी जर्नल्स है।
- UGC की अक्षमता के चलते कम-से-कम 200 प्रिडेटरी जर्नल्स को वैधता मिल गयी है। इसलिये इस सूची को पूरी तरह त्याग दिया जाना चाहिये और मानकों का पालन करते हुए सक्षम संस्थानों की सहभागिता से एक नई श्वेत सूची तैयार की जानी चाहिये जो कि पूर्णतया सही भले ही न हो किंतु वर्तमान सूची से बेहतर हो।